CHRONICLE
Nurturing Talent Since 1990

17 वर्ष UPSC

आईएएस मुख्य परीक्षा

दर्शनशास्त्र

प्रश्नोत्तर रूप में

2008-2024 अध्यायवार हल प्रश्न-पत्र

17 वर्ष (2008–2024)

आईएएस मुख्य परीक्षा अध्यायवार हल प्रश्न-पत्र

दर्शनशास्त्र

प्रश्नोत्तर रूप में

यह पुस्तक संघ लोक सेवा आयोग की सिविल सेवा मुख्य परीक्षा के वैकल्पिक विषय के साथ-साथ राज्य लोक सेवा आयोगों की मुख्य परीक्षाओं तथा अन्य समकक्ष प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु भी समान रूप से उपयोगी है।

- पुस्तक में प्रश्नों के उत्तर को मॉडल हल के रूप में प्रस्तुत किया गया है। प्रश्नों को हल करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि उत्तर सारगर्भित हों तथा पूछे गए प्रश्नों के अनुरूप हों।
- इस पुस्तक में प्रश्नों से संबंधित अन्य विशिष्ट जानकारियों को भी उत्तर में समाहित किया गया है, ताकि अभ्यर्थी इसका उपयोग न सिर्फ हल प्रश्न-पत्र के रूप में, बल्कि अध्ययन सामग्री के रूप में भी कर सकें।
- इस पुस्तक का उपयोग अभ्यर्थी अपनी उत्तर लेखन शैली में सुधार लाने तथा प्रश्नों की प्रवृत्ति व प्रकृति को समझने के लिए भी कर सकते हैं।

संपादकः एन. एन. ओझा

हलः क्रॉनिकल संपादकीय समूह

CHRONICLE
Nurturing Talent Since 1990

अनुक्रमणिका

- दर्शनशास्त्र मुख्य परीक्षा 2024 हल प्रश्न-पत्र-I 1-23
- दर्शनशास्त्र मुख्य परीक्षा 2024 हल प्रश्न-पत्र-II 24-44
- दर्शनशास्त्र मुख्य परीक्षा 2023 हल प्रश्न-पत्र-I 45-56
- दर्शनशास्त्र मुख्य परीक्षा 2023 हल प्रश्न-पत्र-II 57-68

प्रथम प्रश्न-पत्र

दर्शन का इतिहास एवं समस्याएं

1. **प्लेटो एवं अरस्तू** 01-11
प्रत्यय, द्रव्य, आकार एवं पुद्गल, कार्यकारण भाव, वास्तविकता एवं शक्यता

2. **तर्कबुद्धिवाद (देकार्त, स्पिनोजा, लाइबनिज)**... 12-26
देकार्त की पद्धति एवं असंदिग्ध ज्ञान, द्रव्य, परमात्मा, मन-शरीर द्वैतवाद, नियतत्ववाद एवं स्वातंत्र्य

3. **इंद्रियानुभववाद (लॉक, बर्कले, ह्यूम)** 27-38
ज्ञान का सिद्धांत, द्रव्य एवं गुण, आत्मा एवं परमात्मा, संशयवाद

4. **कांटः संश्लेषणात्मक प्रागनुभविक निर्णय की संभाव्यता** 39-47
दिक् एवं काल, पदार्थ, तर्कबुद्धि प्रत्यय, विप्रतिषेध परमात्मा के अस्तित्व के प्रमाणों की मीमांसा

5. **हीगेल** 48-51
द्वंद्वात्मक प्रणाली, परमप्रत्ययवाद

6. **मूर, रसेल एवं पूर्ववर्ती विट्गेंस्टीन** 52-61
सामान्य बुद्धि का मंडन, प्रत्ययवाद का खंडन, तार्किक परमाणुवाद, तार्किक रचना, अपूर्ण प्रतीक, अर्थ का चित्र सिद्धांत, उक्ति एवं प्रदर्शन

7. **तार्किक प्रत्यक्षवाद** 62-67
अर्थ का सत्यापन सिद्धांत, तत्वमीमांसा का अस्वीकार, अनिवार्य प्रतिज्ञप्ति का भाषिक सिद्धांत

8. **उत्तरवर्ती विट्गेंस्टीन** 68-75
अर्थ एवं प्रयोग; भाषा-खेलः व्यक्ति भाषा की मीमांसा

9. **संवृतिशास्त्र (हुसर्ल)** 76-81
प्रणाली, सार सिद्धांत, मनोविज्ञानपरता का परिहार

10. **अस्तित्वपरकतावाद (कीर्कगार्द, सार्त्र, हीडेगर)** 82-92
अस्तित्व एवं सार, वरण, उत्तरदायित्व एवं प्रामाणिक अस्तित्व, विश्वनिसत् एवं कालसत्ता

11. **क्वाइन एवं स्ट्रॉसन** 93-101
इंद्रियानुभववाद की मीमांसा, मूल विशिष्ट एवं व्यक्ति का सिद्धांत

12. **चार्वाक** 102-110
ज्ञान का सिद्धांत, अतींद्रिय सत्वों का अस्वीकार

13. **जैन दर्शन** 111-120
सत्ता का सिद्धांत, सप्तभंगी न्याय, बंधन एवं मुक्ति

14. **बौद्ध दर्शन** 121-137
प्रतीत्यसमुत्पाद, क्षणिकवाद, नैरात्म्यवाद

15. **न्याय-वैशेषिक** 138-153
पदार्थ सिद्धांत, आभास सिद्धांत, प्रमाण सिद्धांत, आत्मा मुक्ति, परमात्मा, परमात्मा के अस्तित्व के प्रमाण, कार्यकारण-भाव का सिद्धांत, सृष्टि का परमाणुवादी सिद्धांत

16. **सांख्य** 154-165
प्रकृति, पुरुष, कार्यकारण-भाव, मुक्ति

17. **योग** 166-170
चित्त, चित्तवृत्ति, क्लेश, समाधि, कैवल्य

18. **मीमांसा** 171-178
ज्ञान का सिद्धांत

19. **वेदांत संप्रदाय** 179-195
ब्रह्मन, ईश्वर, आत्मन, जीव, जगत, माया, अविद्या, अध्यास, मोक्ष, अपृथक सिद्धि, पंचविधभेद

20. **अरविंद** 196-202
विकास, प्रतिविकास, पूर्ण योग।

द्वितीय प्रश्न-पत्र

सामाजिक-राजनैतिक दर्शन

1. **सामाजिक एवं राजनैतिक आदर्श** 203-213
   समानता, न्याय, स्वतंत्रता
2. **प्रभुसत्ता** 214-221
   आस्टिन, बोदां, लास्की, कौटिल्य
3. **व्यक्ति एवं राज्य** 222-231
   अधिकार, कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व
4. **शासन के प्रकार** 232-242
   राजतंत्र, धर्मतंत्र एवं लोकतंत्र
5. **राजनैतिक विचारधाराएं** 243-255
   अराजकतावाद, मार्क्सवाद एवं समाजवाद
6. **मानववाद** 256-271
   धर्मनिरपेक्षतावाद, बहुसंस्कृतिवाद
7. **अपराध एवं दंड** 272-282
   भ्रष्टाचार, व्यापक हिंसा, जातिसंहार, प्राणदंड
8. **विकास एवं सामाजिक उन्नति** 283-284
9. **लिंग भेद** 285-297
   स्त्री भ्रूण हत्या, भूमि एवं संपत्ति अधिकार, सशक्तीकरण
10. **जाति भेद** 298-301
    गांधी एवं अंबेडकर

धर्म दर्शन

1. **ईश्वर की धारणा** 302-306
   गुण, मनुष्य एवं विश्व से संबंध (भारतीय एवं पाश्चात्य)
2. **ईश्वर के अस्तित्व के प्रमाण और उसकी मीमांसा** 307-326
   भारतीय एवं पाश्चात्य
3. **अशुभ की समस्या** 327-332
4. **आत्मा** 333-344
   अमरता, पुनर्जन्म एवं मुक्ति
5. **तर्कबुद्धि, श्रुति एवं आस्था** 345-352
6. **धार्मिक अनुभव** 353-359
   प्रकृति एवं वस्तु (भारतीय एवं पाश्चात्य)
7. **ईश्वर रहित धर्म** 360-364
8. **धर्म एवं नैतिकता** 365-381
   धार्मिक शुचिता एवं परम सत्यता की समस्या
9. **धार्मिक शुचिता एवं परम सत्यता की समस्या** 382-383
10. **धार्मिक भाषा की प्रकृति** 384-394
    सादृश्यमूलक एवं प्रतीकात्मक, संज्ञानवादी एवं निस्संज्ञानवादी

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2024

दर्शनशास्त्र

(प्रथम प्रश्न-पत्र)

खंड-A

प्लेटो एवं अरस्तू

प्रश्न: प्लेटो तथा अरस्तू की आकार की अवधारणाओं के बीच विभेद कीजिए ।

उत्तर: प्लेटो और अरस्तू की "आकार" की अवधारणा के बीच मुख्य विभेद निम्नलिखित है:

1. आकार की प्रकृति:

- **प्लेटो:**

प्लेटो के अनुसार, "आकार" शाश्वत, अपरिवर्तनीय, और पूर्ण होते हैं। ये भौतिक जगत से अलग होते हैं और एक अलग "आकारों का जगत" में निवास करते हैं। उदाहरण: "सौंदर्य" या "न्याय" का आदर्श रूप वास्तविक दुनिया में कहीं नहीं है; यह केवल "आकारों के जगत" में ही मौजूद है।

- **अरस्तू:**

अरस्तू का मानना था कि "आकार" वस्तु के भीतर ही निहित होते हैं और यह उसके पदार्थ के साथ जुड़े होते हैं। "आकार" किसी वस्तु के गुण, उद्देश्य और पहचान को परिभाषित करते हैं। उदाहरण: एक कुर्सी का आकार उसके उपयोग से निर्धारित होता है और यह कुर्सी के भौतिक पदार्थ में ही मौजूद है।

2. भौतिक और आध्यात्मिक दुनिया का संबंध:

- **प्लेटो:**

प्लेटो ने भौतिक और आध्यात्मिक दुनिया को अलग माना। भौतिक जगत परिवर्तनशील, अस्थायी और अपूर्ण है जबकि आध्यात्मिक (आकारों की) जगत शाश्वत, अपरिवर्तनीय और परिपूर्ण है। प्लेटो ने इसे "दोहरे जगत का सिद्धांत" कहा।

- **अरस्तू:**

अरस्तू ने दोहरे जगत की अवधारणा को अस्वीकार किया। उनके अनुसार, भौतिक और आध्यात्मिक जगत एक-दूसरे से अलग नहीं हैं। किसी वस्तु का "रूप" और "पदार्थ" एक साथ मिलकर उसकी संपूर्णता को परिभाषित करते हैं।

3. समझने का तरीका:

- **प्लेटो:**

"आकार" को इंद्रियों से नहीं देखा जा सकता। यह केवल तर्क और चिंतन के माध्यम से समझा जा सकता है। प्लेटो का दृष्टिकोण अमूर्त और बौद्धिक है। उदाहरण: "न्याय" के आदर्श रूप को केवल दार्शनिक विचार-विमर्श और तर्क से समझा जा सकता है।

- **अरस्तू:**

अरस्तू ने अनुभववाद को प्राथमिकता दी। उनके अनुसार, "आकार" को भौतिक वस्तुओं का अध्ययन और अवलोकन करके समझा जा सकता है। उदाहरण: किसी पौधे का "आकार" उसके विकास और व्यवहार को देखकर समझा जा सकता है।

4. परिवर्तन और स्थायित्व:

- **प्लेटो:**

प्लेटो के लिए, "आकार" पूरी तरह स्थिर और अपरिवर्तनीय होते हैं। वे शाश्वत हैं और समय या परिस्थिति के अनुसार नहीं बदलते।

- **अरस्तू:**

अरस्तू के अनुसार, "आकार" विकासशील और परिवर्तनशील होते हैं। वे वस्तु की प्रकृति और उद्देश्य के अनुसार बदल सकते हैं।

5. सार्वभौमिक और विशेष:

- **प्लेटो:**

प्लेटो ने सार्वभौमिकता पर जोर दिया। उनके अनुसार, हर वस्तु का एक आदर्श रूप होता है जो सभी विशेष रूपों का आधार है। उदाहरण: "गोलाई" का आदर्श रूप हर गोल वस्तु (गेंद, चक्र आदि) में समान रूप से मौजूद है।

- **अरस्तू:**

अरस्तू ने विशेषता पर जोर दिया। उनके अनुसार, "आकार" हर वस्तु में विशेष रूप से निहित होता है और वह वस्तु के कार्य से परिभाषित होता है। उदाहरण: एक विशेष कुर्सी का "आकार" उस कुर्सी की कार्यक्षमता और डिजाइन से परिभाषित होता है।

6. उद्देश्य और कार्य:

- **प्लेटो:**

प्लेटो का ध्यान आदर्श पर था न कि भौतिक वस्तुओं के कार्य पर। "आकार" का उद्देश्य भौतिक जगत के परे, आत्मा और सत्य को समझना है।

- **अरस्तू:**

अरस्तू के लिए, हर वस्तु का "आकार" उसके उद्देश्य और कार्य से परिभाषित होता है। उन्होंने "टेलीऑलॉजी" पर जोर दिया, जिसका अर्थ है कि हर वस्तु का एक अंतिम उद्देश्य होता है। उदाहरण: एक चाकू का "आकार" उसके उपयोग (काटना) पर आधारित है।

इस प्रकार प्लेटो और अरस्तू की "आकार" की अवधारणा के बीच मुख्य अंतर उनके दृष्टिकोण में है: प्लेटो का दृष्टिकोण आदर्शवादी और अमूर्त है। अरस्तू का दृष्टिकोण यथार्थवादी, व्यावहारिक और अनुभव आधारित है।

तर्क बुद्धिवाद (देकार्त, स्पिनोजा, लाइबनिज)

प्रश्न: अपने कथन - "जो कुछ भी है, ईश्वर में है" से स्पिनोजा किस प्रकार यह स्थापित करते हैं कि केवल ईश्वर ही निरपेक्ष रूप से यथार्थ है ? समालोचनात्मक विवेचना कीजिए।

उत्तर: स्पिनोजा का कथन "जो कुछ भी है, ईश्वर में है" उनके दर्शन की केंद्रीय अवधारणा है, जो ईश्वर, प्रकृति और अस्तित्व के बीच गहरे संबंध को उजागर करता है। इस कथन में स्पिनोजा ईश्वर को न केवल संसार के स्रष्टा के रूप में प्रस्तुत करते हैं, बल्कि हर चीज का अस्तित्व और उसके स्वरूप को भी उसी में निहित मानते हैं।

ईश्वर ही निरपेक्ष यथार्थ है

सत्ता का एकत्व : स्पिनोजा का मानना है कि ब्रह्मांड में केवल एक ही स्वतंत्र सत्ता है, और वह ईश्वर है। वह इसे ईश्वर अथवा प्रकृति (Deus sive Natura) कहते हैं। उनका तर्क है कि ईश्वर अनंत है, और सभी चीजें उसी अनंत सत्ता की अभिव्यक्तियाँ हैं। जैसे इंटरनेट पर हर वेबसाइट, ऐप या डेटा, किसी न किसी केंद्रीय सर्वर में संग्रहित होता है और उससे जुड़ा होता है, वैसे ही स्पिनोजा की दृष्टि में ब्रह्मांड की हर चीज ईश्वर में स्थित है।

गुण और रूपांतरण: स्पिनोजा के अनुसार, ईश्वर के अनंत गुण हैं, लेकिन मानव केवल दो को समझ सकता है:

- **विचार :** जो मानसिक वास्तविकताओं को दर्शाता है।
- **विस्तार:** जो भौतिक वस्तुओं और घटनाओं को दर्शाता है।

इन गुणों के माध्यम से ब्रह्मांड में हर चीज ईश्वर की अभिव्यक्ति है।

जैसे कोई एक संगीत ट्रैक भौतिक रूप से एक सीडी पर मौजूद हो सकता है और डिजिटल रूप से एक ऑनलाइन फाइल में–दोनों स्वरूप उसी ट्रैक की अभिव्यक्तियाँ हैं।

निर्धारवाद:

स्पिनोजा का दर्शन सख्त निर्धारवाद पर आधारित है। उनका मानना है कि ब्रह्मांड में हर घटना, हर वस्तु, और हर विचार ईश्वर के स्वभाव से निर्धारित है। इसका अर्थ यह है कि ईश्वर में ही सभी कारण और प्रभाव निहित हैं। जलवायु परिवर्तन पृथ्वी के स्वाभाविक नियमों और मानव क्रियाओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुआ है। स्पिनोजा के अनुसार, यह भी ईश्वर (प्रकृति) की ही प्रक्रिया का हिस्सा है।

ईश्वर की अनंतता और अनिवार्यता: स्पिनोजा के अनुसार, ईश्वर अनिवार्य है, क्योंकि उसका अस्तित्व स्व-निर्भर है। ईश्वर का अस्तित्व ब्रह्मांड की हर चीज का आधार है। जैसे गणित में शून्य और अनंत की अवधारणाएँ किसी भी जटिल गणना की आधारशिला हैं, वैसे ही स्पिनोजा का ईश्वर सभी अस्तित्व का आधार है।

आलोचनात्मक विवेचना

- **व्यक्तित्वहीन ईश्वर:** स्पिनोजा का ईश्वर पारंपरिक धर्मों में वर्णित ईश्वर से भिन्न है। यह एक अमूर्त सत्ता है, जो किसी प्रकार की नैतिकता, करुणा, या व्यक्तिगत संबंधों से रहित है। क्या यह ईश्वर केवल एक दार्शनिक निर्माण है, जो व्यक्तिगत और भावनात्मक जरूरतों को पूरा नहीं करता?
- **स्वतंत्रता और नैतिकता का प्रश्न:** स्पिनोजा का निर्धारवाद मानव स्वतंत्रता और नैतिक उत्तरदायित्व पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करता है। यदि सभी चीजें ईश्वर के स्वभाव से पूर्वनिर्धारित हैं, तो मानव स्वतंत्रता का स्थान कहाँ है? जैसे; कृत्रिम बुद्धिमत्ता का विकास, जो पूर्वनिर्धारित एल्गोरिदम पर आधारित है, यह सवाल उठाता है कि क्या यह "स्वतंत्र निर्णय" ले सकता है।
- **सर्वेश्वरवाद की सीमाएँ:** स्पिनोजा के सर्वेश्वरवाद में यह प्रश्न उठता है कि यदि सब कुछ ईश्वर है, तो क्या ईश्वर का कोई विशिष्ट अस्तित्व बचता है? यह दृष्टिकोण वास्तविकता को इतना व्यापक बना देता है कि "ईश्वर" और "जगत" के बीच अंतर समाप्त हो जाता है।
- **प्राकृतिक आपदाओं का प्रश्न:** यदि सब कुछ ईश्वर की अभिव्यक्ति है, तो प्राकृतिक आपदाएँ, युद्ध, और महामारी जैसी नकारात्मक घटनाओं को किस प्रकार ईश्वर का भाग माना जाए? जैसे: COVID-19 महामारी को स्पिनोजा के दर्शन से कैसे समझा जाए? क्या यह भी ईश्वर के स्वभाव का हिस्सा है?

स्पिनोजा का यह कथन "जो कुछ भी है, ईश्वर में है" एक गहन दार्शनिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जो ब्रह्मांड और ईश्वर के बीच एक अटूट संबंध स्थापित करता है। उनका तर्क यह है कि ईश्वर ही एकमात्र निरपेक्ष यथार्थ है, और अन्य सभी चीजें उसी के भीतर निहित हैं। हालाँकि, इस विचार के व्यावहारिक और धार्मिक निहितार्थों को लेकर आलोचना की गई है। समसामयिक दृष्टिकोण से, उनका दर्शन पर्यावरणीय संकट, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, और नैतिकता जैसे मुद्दों को समझने का एक नया ढाँचा प्रदान कर सकता है।

प्रश्न: बुद्धिवादियों में किसकी मानस-देह समस्या की व्याख्या मानव स्वातंत्र्य तथा संकल्प स्वातंत्र्य से सुसंगत है? समालोचनात्मक विवेचना कीजिए।

उत्तर: मानस-देह समस्या दार्शनिक विमर्श का एक क्लासिक विषय है, जो यह समझने का प्रयास करता है कि मानसिक और भौतिक वास्तविकता के बीच क्या संबंध है। इस समस्या का मूल प्रश्न यह है कि क्या मन और शरीर स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में हैं, और यदि हाँ, तो उनके बीच संवाद या परस्पर क्रिया किस प्रकार संभव है। इस संदर्भ

2. प्रत्यक्षीकरण का सिद्धांत :

- दूसरा मताग्रह यह मानता है कि प्रत्येक अर्थपूर्ण कथन को अनुभवजन्य प्रमाण या संवेदनाओं के संदर्भ में पूरी तरह से व्यक्त किया जा सकता है। इसे "प्रत्यक्षीकरण का सिद्धांत" भी कहा जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि किसी भी कथन की सत्यता या असत्यता को उसके पीछे के अनुभवजन्य तथ्यों में 'सीमित' किया जा सकता है।
- क्वाइन ने इस सिद्धांत को अवास्तविक और अत्यधिक सरलीकरण मानते हुए खंडित कर दिया। उन्होंने तर्क दिया कि विज्ञान और ज्ञान के क्षेत्र में सिद्धांत और परिकल्पनाएँ आम तौर पर जटिल और अंतर्संबंधित होती हैं। किसी एकल कथन की सत्यता को केवल अनुभवजन्य तथ्यों तक सीमित करना संभव नहीं है।
- हमारा ज्ञान एक "वेब ऑफ बिलीफ्स" (Web of Beliefs) के रूप में कार्य करता है, जिसमें अलग-अलग कथन और विश्वास एक दूसरे से जुड़े होते हैं। अनुभवजन्य प्रमाण केवल इस पूरे ढांचे को प्रभावित करते हैं, न कि किसी व्यक्तिगत कथन को।
- क्वाइन ने यह भी कहा कि किसी कथन को पूरी तरह से संवेदनात्मक अनुभव में बदलना तर्कसंगत नहीं है क्योंकि भाषा और ज्ञान की संरचना एक जटिल प्रणाली है जो अनुभव के साथ अंत:क्रिया करती है।

क्वाइन का समग्र दृष्टिकोण :

- क्वाइन ने इन दोनों मताग्रहों को खारिज करते हुए यह प्रस्तावित किया कि भाषा और ज्ञान को एक समग्र दृष्टिकोण से देखना चाहिए। उन्होंने यह तर्क दिया कि कोई भी कथन स्वतंत्र रूप से सत्य या असत्य नहीं होता। किसी कथन की सत्यता या असत्यता का निर्धारण पूरे ज्ञान प्रणाली के संदर्भ में किया जाना चाहिए।
- अनुभवजन्य प्रमाण पूरे "वेब ऑफ बिलीफ्स" को प्रभावित करता है और इस वेब के भीतर एकीकृत रूप से संशोधन होता है। ज्ञान की संरचना और भाषा के उपयोग को एक जटिल और अंतर्संबंधित प्रणाली के रूप में समझना चाहिए।

क्वाइन के 'टू डॉगमास ऑफ एम्पिरिसिस्म' ने पारंपरिक अनुभववाद और विश्लेषणात्मक दर्शन की नींव को गहराई से प्रभावित किया। उनकी आलोचना ने यह दिखाया कि विश्लेषणात्मक और व्यावहारिक कथनों में स्पष्ट विभाजन कृत्रिम और अवास्तविक है। ज्ञान को पूरी तरह से अनुभवजन्य तथ्यों तक सीमित करना संभव नहीं है। क्वाइन का समग्र दृष्टिकोण भाषा, तर्क और अनुभव के संबंध में एक नई सोच प्रस्तुत करता है। इसने दर्शन, विज्ञान, और भाषा विज्ञान के क्षेत्र में नई दिशाएँ खोलीं और ज्ञान के प्रति एक अधिक समग्र और वास्तविक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया।

खंड-B

चार्वाक

प्रश्न: क्या आप सोचते हैं कि चार्वाक दर्शन का स्वरूप प्रत्यक्षवादी/भाववादी है? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क एवं प्रमाण प्रस्तुत कीजिए ।

उत्तर: चार्वाक दर्शन भारतीय दर्शन में अपनी भौतिकवादी और नास्तिक दृष्टि के लिए प्रसिद्ध है। यह केवल प्रत्यक्ष अनुभव को ज्ञान का प्रमाण मानता है और अन्य ज्ञान-स्रोतों, जैसे अनुमान, शब्द और उपमान को अविश्वसनीय ठहराता है। चार्वाक दर्शन के प्रमुख सिद्धांतों और इसकी प्रत्यक्षवादी और भाववादी प्रवृत्तियों का विश्लेषण निम्नलिखित है-

चार्वाक दर्शन के प्रमुख सिद्धांत

ज्ञानमीमांसा: चार्वाक का तर्क है कि प्रत्यक्ष अनुभव ही ज्ञान का एकमात्र विश्वसनीय स्रोत है।

- **प्रत्यक्ष अनुभव :** जो इंद्रियों द्वारा अनुभव किया जा सकता है, वही सत्य है। जैसे अग्नि का ताप महसूस करना या प्रकाश देखना।
- **अनुमान और श्रुति का खंडन:** वेद जैसे अप्रत्यक्ष ज्ञान-स्रोतों को चार्वाक अविश्वसनीय मानता है। उदाहरण के लिए, जब तक आग प्रत्यक्ष रूप से न देखी जाए, धुएं के आधार पर उसे स्वीकार नहीं किया जा सकता।

भौतिकवाद: चार्वाक भौतिक यथार्थ को प्राथमिकता देता है।

- **भौतिक तत्व:** चार्वाक मानता है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, और वायु से संसार बना है और चेतना इन्हीं का परिणाम है।
- **आत्मा और पुनर्जन्म का खंडन:** आत्मा, पुनर्जन्म और ईश्वर जैसी धारणाओं को चार्वाक भ्रम मानता है। मृत्यु के बाद चेतना समाप्त हो जाती है।

जीवन का उद्देश्य और नैतिकता: चार्वाक वर्तमान जीवन को सर्वोपरि मानता है और भोगवादी दृष्टिकोण अपनाता है।

- **भोगवाद:** "यावत् जीवेत् सुखं जीवेत्, ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।" अर्थात जीवन को सुखपूर्वक जीना चाहिए, चाहे इसके लिए ऋण ही क्यों न लेना पड़े।

चार्वाक दर्शन और प्रत्यक्षवाद

प्रत्यक्षवाद आधुनिक दर्शन की एक विचारधारा है, जो केवल अनुभवजन्य और प्रत्यक्ष रूप से सिद्ध ज्ञान को मान्यता देती है।

- **समानताएं:**
  - चार्वाक और प्रत्यक्षवाद दोनों अनुभवजन्य ज्ञान पर बल देते हैं।
  - दोनों अधिभौतिक धारणाओं, जैसे आत्मा और पुनर्जन्म, को अस्वीकार करते हैं।
  - धार्मिक ग्रंथों और परंपरागत विश्वासों की आलोचना करते हैं।

इस प्रकार, चार्वाक को भारतीय दर्शन में प्राचीन प्रत्यक्षवाद कहा जा सकता है।

क्या चार्वाक दर्शन भाववादी है?

भाववाद चेतना और विचार को वास्तविकता का आधार मानता है।

- **असमानताएं:**
  - चार्वाक चेतना को भौतिक तत्वों का परिणाम मानता है, जबकि भाववाद इसे स्वतंत्र और प्राथमिक मानता है।
  - आत्मा और पुनर्जन्म जैसी धारणाओं को चार्वाक अस्वीकार करता है।

इस प्रकार, चार्वाक दर्शन भाववादी नहीं है।

चार्वाक दर्शन को स्पष्ट रूप से प्रत्यक्षवादी और भौतिकवादी कहा

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2024

दर्शनशास्त्र

(द्वितीय प्रश्न-पत्र)

खंड-A

सामाजिक - राजनैतिक दर्शन

सामाजिक एवं राजनैतिक आदर्श

प्रश्नः प्लेटो की न्याय की अवधारणा का संक्षेप में विवेचन कीजिये ।

उत्तर: प्लेटो ने अपनी न्याय की अवधारणा अपने प्रसिद्ध ग्रंथ **"रिपब्लिक"** में प्रस्तुत की। उनके अनुसार, न्याय केवल व्यक्तिगत नैतिकता का गुण नहीं है, बल्कि समाज और राज्य की स्थिरता और समृद्धि का आधार भी है। प्लेटो के लिए न्याय का अर्थ है **"अपना कार्य करना"** यानी प्रत्येक व्यक्ति और वर्ग अपनी स्वाभाविक भूमिका का पालन करे और दूसरों के कार्यों में हस्तक्षेप न करे।

व्यक्तिगत न्याय

प्लेटो ने आत्मा को तीन भागों में विभाजित किया:

1. **लौकिक भाग :** सत्य और ज्ञान की खोज करता है।
2. **उत्साही भाग :** साहस, जोश और आत्म-सम्मान का प्रतीक है।
3. **इच्छाशक्ति भाग :** भौतिक इच्छाओं और सुख की लालसा का प्रतिनिधित्व करता है।

न्याय का अर्थ आत्मा के इन तीन भागों के सामंजस्य में है। जब लौकिक भाग आत्मा का शासक होता है, उत्साही भाग उसका समर्थन करता है और इच्छाशक्ति भाग नियंत्रित रहता है तो व्यक्ति न्यायपूर्ण होता है।

सामाजिक न्याय

प्लेटो के अनुसार, समाज की संरचना भी तीन वर्गों में बंटी है:

1. **शासक वर्ग :** राज्य का संचालन और नीति-निर्माण करते हैं। इनका गुण ज्ञान है।
2. **सैनिक वर्ग :** राज्य की रक्षा और सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं। इनका गुण साहस है।
3. **उत्पादक वर्ग :** कृषक, व्यापारी और शिल्पकार, जो समाज की आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। इनका गुण श्रम और संतोष है।

राज्य में न्याय तब स्थापित होता है, जब हर वर्ग अपने कार्य को बिना हस्तक्षेप निभाए और आपस में सामंजस्य बनाए। शासक वर्ग बुद्धिमान निर्णय ले, सैनिक वर्ग साहसपूर्वक सुरक्षा करें और उत्पादक वर्ग आर्थिक गतिविधियाँ संचालित करें।

न्याय का उद्देश्य

प्लेटो ने न्याय को समाज और व्यक्ति दोनों के संतुलन और कल्याण से जोड़ा। न्याय का उद्देश्य व्यक्तिगत आत्मा में सामंजस्य स्थापित करना और समाज में शांति व स्थिरता सुनिश्चित करना है।

प्लेटो की न्याय की अवधारणा व्यक्ति और समाज में कर्तव्य, सामंजस्य और अनुशासन पर आधारित है। यह आदर्श राज्य और आदर्श समाज की संरचना का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। उनकी यह परिकल्पना आज भी राजनीतिक दर्शन और प्रशासन में प्रेरणादायक मानी जाती है, क्योंकि यह स्थिरता, शांति और समृद्धि की ओर मार्ग प्रशस्त करती है।

प्रश्नः राजनैतिक आदर्शों के रूप में स्वतन्त्रता (लिबर्टि) एवं समानता की अवधारणाओं का समीक्षात्मक विवेचन कीजिये।

उत्तर: राजनीति में स्वतंत्रता और समानता दोनों ही अत्यंत महत्वपूर्ण आदर्श माने जाते हैं। ये आदर्श लोकतांत्रिक व्यवस्था के मूल आधार हैं और सामाजिक न्याय की ओर मार्गदर्शन करते हैं। हालांकि, इन दोनों के बीच एक जटिल और कभी-कभी विरोधाभासी संबंध भी देखा जाता है।

स्वतंत्रता

स्वतंत्रता का अर्थ है व्यक्ति की उस स्थिति की स्वतंत्रता जिसमें वह अपनी इच्छाओं, विचारों और कार्यों का पालन बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के कर सके।

स्वतंत्रता के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित है:

1. **नकारात्मक स्वतंत्रता :** बाहरी हस्तक्षेप से मुक्ति, व्यक्ति को अपनी इच्छाओं के अनुसार कार्य करने की स्वतंत्रता।
2. **सकारात्मक स्वतंत्रता:** आत्मनिर्णय और आत्मनिर्माण की स्वतंत्रता, व्यक्ति को अपनी क्षमताओं को पूरा करने के लिए आवश्यक अवसर और संसाधन मिलना।
3. **सामाजिक स्वतंत्रता :** समाज में व्यक्ति को अपनी पहचान, अभिव्यक्ति और कार्यों में स्वतंत्रता, सामाजिक भेदभाव से मुक्ति।

खंड-B

धर्म दर्शन

ईश्वर की धारणा

प्रश्नः स्पिनोजा के दर्शन में ईश्वर की अवधारणा किस प्रकार उनकी द्रव्य तथा गुण की तत्त्वमीमांसा में अन्तर्बद्ध है ? आलोचनात्मक विवेचना कीजिए ।

उत्तरः बेनेडिक्ट स्पिनोजा आधुनिक यूरोपीय दर्शन के प्रमुख दार्शनिकों में से एक थे। उनका दर्शन बुद्धिवाद पर आधारित था, जिसमें उन्होंने गणितीय पद्धति का उपयोग कर अस्तित्व और वास्तविकता की व्याख्या की। उनकी प्रमुख कृति "एथिका" में उन्होंने ईश्वर, द्रव्य, प्रकृति, स्वतंत्रता और नैतिकता से संबंधित तत्त्वमीमांसात्मक प्रश्नों का विश्लेषण किया।

स्पिनोजा की ईश्वर की अवधारणा परंपरागत ईसाई, यहूदी और इस्लामिक मतों से भिन्न है। उनके अनुसार, ईश्वर कोई बाहरी, मानवीय गुणों से युक्त सर्वशक्तिमान सत्ता नहीं, बल्कि स्वयं संपूर्ण अस्तित्व का आधार है।

स्पिनोजा की तत्त्वमीमांसा में द्रव्य की अवधारणा

स्पिनोजा की तत्त्वमीमांसा का आधार "द्रव्य" की अवधारणा है। वे "एथिका" में द्रव्य को परिभाषित करते हैं:

"द्रव्य वह है जो स्वयं में विद्यमान है और जिसकी संकल्पना स्वयं के माध्यम से की जाती है।" अर्थात, द्रव्य स्वतंत्र सत्ता रखता है और अपने अस्तित्व के लिए किसी अन्य सत्ता पर निर्भर नहीं करता।

द्रव्य की विशेषताएँ

1. **द्रव्य एक ही है** – ब्रह्मांड में केवल एक ही द्रव्य है, और वह स्वयं ईश्वर है।
2. **द्रव्य अनंत है** – इसमें किसी प्रकार की सीमा नहीं है, इसलिए यह विभाज्य नहीं हो सकता।
3. **द्रव्य अपरिवर्तनीय है** – यह स्वयं में अनिवार्य है और उत्पत्ति तथा विनाश से परे है।
4. **द्रव्य आत्मनिर्भर है** – इसे किसी बाहरी शक्ति की आवश्यकता नहीं है।

स्पिनोजा के अनुसार, यदि दो स्वतंत्र द्रव्य होते, तो उनके बीच कोई संबंध नहीं होता, परंतु हम देखते हैं कि समस्त ब्रह्मांड में कारण-परिणाम का संबंध स्पष्ट रूप से विद्यमान है। अतः, उन्होंने द्वैतवाद और बहुवाद को खंडित कर अद्वैतवाद को प्रतिपादित किया।

ईश्वर और द्रव्य की समानता

स्पिनोजा के अनुसार, ईश्वर और द्रव्य एक ही हैं। पारंपरिक ईश्वर-कल्पना के विपरीत, उन्होंने ईश्वर को किसी चेतन, निर्णय लेने वाली सत्ता के रूप में न मानकर, संपूर्ण अस्तित्व का आधार माना।

स्पिनोजा के दर्शन में:

- ईश्वर कोई सजीव सत्ता नहीं, बल्कि अनिवार्य सत्ता है।
- ईश्वर स्वयं में विद्यमान और आत्मनिर्भर है।
- ईश्वर ही समस्त सृष्टि का स्रोत है, और उसके बाहर कुछ भी अस्तित्व में नहीं है।

उन्होंने ईश्वर की परिभाषा इस प्रकार दीः

"ईश्वर एक अनंत द्रव्य है, जो अनंत गुणों से युक्त है, जिनमें से प्रत्येक गुण अनंत और शाश्वत सार को व्यक्त करता है।" अर्थात, ईश्वर ही समस्त वास्तविकता का आधार है, और जो कुछ भी अस्तित्व में है, वह उसी की अवस्थाएँ हैं।

गुण की अवधारणा और ईश्वर

स्पिनोजा के अनुसार, गुण वे विशेषताएँ हैं जिनके माध्यम से हम द्रव्य को पहचानते हैं।

ईश्वर के गुणों की विशेषताएँ

- **ईश्वर अनंत गुणों वाला द्रव्य है,** लेकिन मनुष्य केवल दो गुणों को ही जान सकता हैः
  1. **चिंतन** – इसमें चेतना, मन और विचारों की सत्ता आती है।
  2. **विस्तार** – इसमें भौतिक जगत और पदार्थ की सत्ता आती है।

स्पिनोजा के अनुसार, ईश्वर ही चिंतन और विस्तृत होने वाले द्रव्य का स्रोत है।

अवस्थाएँ और ईश्वर की सर्वव्यापकता

स्पिनोजा के अनुसार, अवस्थाएँ वे विशेष रूप होते हैं जिनमें द्रव्य स्वयं को अभिव्यक्त करता है। स्पिनोजा के अनुसार :

- प्रत्येक वस्तु और विचार ईश्वर की अवस्थाएँ हैं।
- ईश्वर और प्रकृति एक ही हैं।
- ईश्वर को 'सक्रिय प्रकृति' और 'निष्क्रिय प्रकृति' के रूप में देखा जा सकता है।

स्पिनोजा का यह दृष्टिकोण सर्वेश्वरवाद को जन्म देता है, जिसमें ईश्वर को बाहरी शक्ति के रूप में नहीं, बल्कि स्वयं प्रकृति के रूप में देखा जाता है।

आलोचनात्मक विवेचना

स्पिनोजा की अवधारणा की विशेषताएँ

1. **अद्वैतवाद का प्रतिपादन** – द्वैतवाद और बहुवाद को अस्वीकार किया।
2. **परंपरागत ईश्वर-कल्पना का विरोध** – ईश्वर को चेतन सत्ता के बजाय अपरिवर्तनीय और अनंत द्रव्य के रूप में प्रस्तुत किया।
3. **स्वतंत्र इच्छाशक्ति का निषेध** – चूँकि सब कुछ ईश्वर की अवस्थाओं के रूप में अनिवार्यता के सिद्धांत के तहत संचालित होता है, इसलिए स्वतंत्र इच्छाशक्ति का स्थान नहीं बचता।

स्पिनोजा की आलोचना

1. ईश्वर और प्रकृति के बीच अंतर समाप्त हो जाता है।
2. **नैतिकता और स्वतंत्रता का संकट** – यदि सब कुछ ईश्वर की अवस्थाएँ मात्र हैं, तो व्यक्तिगत नैतिकता और नैतिक उत्तरदायित्व का क्या स्थान है?

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2023

दर्शनशास्त्र

(प्रथम प्रश्न-पत्र)

खंड-A

प्लेटो एवं अरस्तू

प्रश्नः अरस्तू के वास्तविकता तथा शक्यता के बीच प्रभेद की व्याख्या प्रस्तुत कीजिए। क्या यह प्राचीन ग्रीक दर्शन में प्रस्तुत सत् तथा संभवन की समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है? उचित उदाहरणों सहित व्याख्या कीजिए।

उत्तरः अरस्तू के अनुसार तत्वमीमांसा सत् के सर्वोच्च सिद्धांतों की गवेषणा है। सत् का प्रत्यय अनुभवातीत है। यह किसी भी प्रकार के वर्गीकरण से ऊपर है। हम ऐसा नहीं कह सकते कि आध्यात्मिक सत् तथा मूर्त सत् विभिन्न प्रकार के सत् हैं। परन्तु देह और आत्मा समान अर्थ में सत् हैं। सत् को सदृश कहा गया है। प्रत्येक वस्तु किसी न किसी अर्थ में सत् का निरूपण करती है: एक स्वस्थ व्यक्ति, एक स्वस्थ प्रभाव, एक स्वस्थ अभिलाषा इत्यादि।

- सत् के प्रत्यय अरस्तू कुछ स्वत: प्रमाणित नियम विकसित करते हैं:
  - **व्याघात का नियम :** कोई भी वस्तु एक ही देश तथा काल में समान परिस्थितियों में अस्तित्ववान तथा अनस्तित्ववान दोनों ही नहीं हो सकती है। एक ही वस्तु का होना और न होना असंभव है।
  - **तादात्म्य का नियमः** प्रत्येक वस्तु जो वह है, वह है। अर्थात जो है वह है और जो नहीं, वह नहीं है।
  - **मध्य परिहार का नियमः** इसमें किसी वस्तु का होना या न होना सुनिश्चित होता है। यह स्पष्ट है की यदि हम एक विकल्प को स्वीकार करे, तो दूसरे विकल्प को अस्वीकार करना होगा।
- निर्धारण के क्रम में वास्तविकता एवं संभाव्यता सत् के प्रथम सिद्धांत है। वास्तविकता पूर्णता को सूचित करती है, जबकि संभाव्यता पूर्णता की क्षमता है। यह उस पूर्णता को ग्रहण करने की क्षमता को सूचित करता है, जो वर्तमान में वस्तुत: प्राप्त नहीं है।
- प्रत्येक अस्तित्वान सत् अपने वर्तमान अस्तित्व की पूर्णता को धारण करता है: वास्तव में यह वह है जो यह है। यह कुछ और होने के लिए संशोधित हो सकता है। इस कुछ और की ओर, इस नवीन तात्विक अथवा आकस्मिक पूर्णता की ओर, अस्तित्ववान सत् सामर्थ्यवान है।

अतएव हम कह सकते हैं कि प्रत्येक अस्तित्ववान सत् वास्तविक रूप में वह है जो यह है, परतु संभाव्य: वह है जो यह हो सकता है। समभाव्यता केवल अमूर्त रूप से अस्तित्ववान नहीं रहती है; यह सदैव ही एक विशिष्ट वास्तविकता के लिए संभाव्यता है।

तर्कबुद्धिवाद (देकार्त, स्पिनोजा, लाइबनिज)

प्रश्नः "उस वस्तु को स्वतंत्र कहा जा सकता है जो केवल अपने स्वरूपवश अनिवार्यतः अस्तित्ववान हो, और जो स्वयमेव कृत्यप्रति नियतिबद्ध हो।" इस कथन के आलोक में स्पिनोजा के नियतत्ववाद तथा स्वातंत्र्य संबंधी विचारों की विवेचना कीजिए।

उत्तरः स्पिनोजा के नियतत्ववाद एवं स्वातंत्र्य के अनुसार ईश्वर ही एकमात्र द्रव है और प्रकृति के साथ इसका तादात्म्य सम्बन्ध है। ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य की सत्ता नहीं है। इनके सम्बन्ध में स्पिनोजा नियतिवादी हैं परन्तु उनका यह नियतिवाद बाह्य नियतिवाद न होकर आर्तरिक नियतिवाद है।

- **ईश्वर में बाह्य नियतिवाद नहीं हो सकता है-**
  - क्योंकि ईश्वर में परतंत्रता का भाव उत्पन्न हो जाएगा।
  - ईश्वर से अलग किसी भी वस्तु का कोई अस्तित्व नहीं है।
- स्पिनोजा के अनुसार ईश्वर के कार्यों में आंतरिक नियतिवाद है क्योंकि वह स्वयं संचालित नियमों के द्वारा ही शासित होता है। ईश्वर वही करता है, जो उसके स्वभाव के अनुकूल है और इस रूप में ईश्वर स्वतंत्र है।
- स्वतंत्रता का अर्थ स्वच्छंदता अर्थात कुछ भी कार्य करने की छूट मानी जाए तो फिर वैसी स्थिति में ईश्वर को स्वतंत्र नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि ईश्वर भी अपने आतंरिक नियमों से बंधा है। इस प्रकार यहाँ आर्तरिक अनिवार्यता स्वतंत्रता को इंगित करती है।
- स्पिनोजा के नियतिवाद के अनुसार विश्व की सभी घटनाएँ और प्रत्येक वस्तु पहले से ही नियत है, जो कुछ भी विश्व में हो रहा है वह अवश्यम्भावी है। किसी सांसारिक घटना का क्रम बदला नहीं जा सकता है। स्पिनोजा के अनुसार प्रकृति में कहीं कोई आकस्मिकता नहीं है। ईश्वरीय प्रकृति की अनिवार्यता से सभी वस्तुएं अपने अस्तित्व और क्रिया में नियत हैं।
- स्पिनोजा के अनुसार स्वच्छंदता के सन्दर्भ में स्वतंत्रता न तो ईश्वर में हैं और न ही मानव में। ईश्वर में स्वत्रंत्रता नहीं है क्योंकि वह अपने स्वभाव से विवश है। मनुष्य में भी इच्छा स्वतंत्र नहीं है।

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2023

दर्शनशास्त्र

(द्वितीय प्रश्न-पत्र)

खंड-A

सामाजिक एवं राजनैतिक आदर्श

प्रश्न: निष्पक्षता के रूप में न्याय से क्या अभिप्राय है? रॉल्स के न्याय के सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।

उत्तर: न्याय-संबंधी जॉन रॉल्स की अवधारणा के दो पहलू हैं। प्रथम, वह एक "संवैधानिक लोकतंत्र" की मांग करती है, यानी कानूनों की सरकार और वो ऐसी हो जो वश में हो, जवाबदेह हो और जिम्मेवार हो। दूसरे, वह ''एक निश्चित रीति से" मुक्त अर्थव्यवस्था के नियमन में विश्वास करती है।

- "यदि कानून व सरकार", रॉल्स लिखते हैं, "बाज़ार को प्रतिस्पर्धात्मक रखने, संसाधनों को पूरी तरह नियोजित रखने, सम्पत्ति व संवृद्धि व्यापक रूप से समयोपरि वितरित कर देने एवं उचित सामाजिक न्यूनातिन्यून को कायम रखने हेतु प्रभावी रूप से काम करते हैं, तब यदि सभी के लिए शिक्षा द्वारा दायित्व-स्वीकृत अवसर की समानता हो, तो परिणामित वितरण न्यायपूर्ण होगा"।
- इन परिस्थितियों के तहत, रॉल्स का दावा है, लोग शाब्दिक क्रम में न्याय संबंधी दो सिद्धांतों को सहर्ष स्वीकार करेंगे। पहला है 'समानता सिद्धांत', जिसमें हर व्यक्ति को दूसरों की सदृश स्वतंत्रता के अनुरूप ही सर्वाधिक व्यापक स्वतंत्रता का समान अधिकार होगा। यहां समान स्वतंत्रता को उदारवादी लोकतांत्रिक शासन-प्रणालियों के सुविदित अधिकारों के रूप में साकार किया जा सकता है।
- इनमें शामिल हैं - राजनीतिक भागीदारी हेतु समान अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, धार्मिक स्वतंत्रता, कानून के समक्ष स्वतंत्रता, इत्यादि।
- दूसरे सिद्धांत को 'भिन्नता सिद्धांत' कहा जाता है, जिसमें रॉल्स का तर्क है कि असमानताओं को केवल तभी सही ठहराया जा सकता है, यदि उनसे निम्नतम लाभांवितों को लाभ पहुंचता हो।

न्याय संबंधी रॉल्स के सिद्धांत में लोगों को सामाजिक व्यवस्था संबंधी एक विकल्प चुनना पड़ता है। वे स्वभावत: एक इच्छास्वातंत्र्यवादी समाज चुनेंगे। यह सिद्धांत सभी को समान मौलिक स्वतंत्रताएं प्रदान करता है।

प्रभुसत्ता

प्रश्न:लास्की ने संप्रभुता के निरपेक्ष स्वरूप को क्यों अस्वीकार किया? व्याख्या कीजिए।

उत्तर: डेविड हैल्ड के अनुसार संप्रभुता का अर्थ है "समुदाय के अन्दर राजनीतिक प्राधिकार जिसके पास एक प्रदत्त क्षेत्र के भीतर नियम, विनियम और नीति निर्धारण के लिए अविवादित अधिकार होता है।"

- परम्परागत राजनीति-सिद्धांत के अनुसार संप्रभुता का अभिप्राय यह है कि राज्य की शक्ति शंकारहित है और राज्य को अधिकार है कि वह अपने नागरिकों से निष्ठा बनाए रखने की अपेक्षा करें। इसका अर्थ यह भी निकलता है कि राज्यादेश का उल्लंघन करने पर जुर्माना (penalty) लगेगा अथवा अन्य प्रकार से दंडनीय होगा।
- राज्य की सर्वोच्च शक्ति के रूप में संप्रभुता एक आधुनिक धारणा है। सामाजिक दार्शनिक रूसो ने जनता में अवस्थित संप्रभुता को 'आम राय' के रूप में व्यक्त किया। रूसो के अनुसार, आम राय और संप्रभुता अन्तर-परिवर्तनीय संकल्पनाएं हैं। संप्रभुता असीमित, सर्वोच्च और निरपेक्ष होती है।
- लास्की संप्रभुता के निरपेक्ष स्वरूप को अस्वीकार करते हैं। लास्की के अनुसार, संप्रभुता कुछ निश्चित अवधि को छोड़कर हमेशा सीमाओं के अधीन होती है, यह वह अवधि थी, जब राष्ट्र-राज्य अस्तित्व में आए और राजाओं ने अपना अधिकार कायम किया।
- यदि हम इस संक्षिप्त अवधि को छोड़ दें, तो हमें निरपेक्ष संप्रभुता का कोई उदाहरण नहीं मिलेगा। आधुनिक समय में, संप्रभुता सीमित है। इसका एकमात्र अपवाद ब्रिटिश नरेश हो सकता था, परन्तु लास्की का तर्क है, "प्रत्येक को पता है कि आस्टिन के अनुसार संसद में नरेश को संप्रभु निकाय के रूप में मानना बकवास है।" कोई भी संसद रोमन कैथोलिक चर्च को मताधिकार से वंचित नहीं कर सकती, अथवा श्रमिक संगठनों के अस्तित्व को नकार सकती है।

अत: लास्की का कहना है, ''किसी भी संप्रभु को कहीं भी असीमित शक्तियां प्राप्त नहीं हुई हैं और ऐसा करने का प्रयास रक्षा उपाय के रूप में सामने आया है।'' वस्तुत: प्रत्येक संप्रभु को समाज के अन्दर कार्य करना पड़ता है और समाज ऐसे रीति-रिवाजों और परम्पराओं के अनुसार कार्य करता है, जो लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आते हैं तथा कोई भी शासक चाहे वह कितना ही निर्दयी क्यों न हो, उनका उल्लंघन नहीं कर सकता।